श्रीपरमात्मने नमः ।

स्वर्गीय कविवर भूधरदासजीविरचित

जैनशतक ।

अर्थात्

हिन्दीके १०० पद्योंका मनोहर संग्रह

(तृतीय संशोधित संस्करण ।)

संशोधक—नाथूराम प्रेमी ।

प्रकाशक—

जैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालय, बम्बई ।

श्रीलक्ष्मीनारायण प्रेस नं ४०२ ठाकुरद्वार बम्बईमें कृष्णराव
सखाराम पाटकरके प्रबन्धसे छपाकर प्रकाशित हुआ ।

वीरनिर्वाण संवत् २४४१,

मार्च १९१५ ।

मूल्य ढाई आना ।



Printed by—Crishnarao Sakharam Patkar at the
Shri Laxmi–Narayan Press, 402, Thakurdwar Bombay
and
Published by Nathuram Premi
Propriter—Jain Granth Ratnakar Karyalaya
Hirabag, Bombay.



निवेदन ।

(द्वितीय संस्करणका)

विद्यार्थियोके सुभीतेके लिए अबके सस्करणमें टिप्पणी पहलेसे लगभग दूनी कर दी गई है और प्रायः प्रत्येक कठिन शब्दका वा वाक्यका अभिप्राय स्पष्ट कर दिया गया है। विचारपूर्वक पढनेसे अबकी बारकी टिप्पणी टीकाका काम दे सकती है।

जिन पद्योके समान आशयवाले श्लोक हमको संस्कृत ग्रन्थोंमें मिले है, अबकी बार उन्हे भी टिप्पणीमे दे दिया है। कुछ श्लोक पीछेसे मिले थे इस लिए वे परिशिष्टमे प्रकाशित किये जाते है। विद्वान् पाठक देखे कि अच्छे कवि दूसरोंका भाव लेकर की हुई कविताको भी अपनी प्रतिभासे कैसी अच्छी सजाते हैं।

बम्बई—चन्दाबाडी।
मार्गशीर्ष कृष्ण। ३–२४३७ } नाथूराम प्रेमी.



तीसरा संस्करण बिना किसी फेर-बदलके ज्योंका त्यों प्रकाशित किया जाता है। १–३–१९१५।



ॐ नम सिद्धेभ्य ।

कविवर भूधरदासविरचित

जैनशतक ।

श्रीआदिनाथस्तुति ।

सवैया (मात्रा ३२) ।

ज्ञानजिहाज बैठि गनधरसे, गुनपयोधि जिस नाहिं तरे हैं। अमरसमूह आनि अवनीसौं, घसि घसि सीस प्रनाम करे हैं ॥ किधौं भाल--कुकरमकी रेखा, दूर करनकी बुद्धि धरे हैं। ऐसे आदिनाथके अँह-निस, हाथ जोरि हम पॉय परे हैं ॥ १ ॥

काउसग्गमुद्रा धरि वनमैं, ठाड़े रिषभ रिद्धि तजि हीनी। निहचल अंग मेरु है मानौं, दोऊ भुजा छोर जिन दीनी ॥ फँसे अनंत जंतु जग-चहले, दुखी देखि करुना चित लीनी। काढन काज तिन्हैं समरथ प्रभु, किधौं बॉह ये दीरघ कीनी ॥ २ ॥

करनौं कछु न करनतैं कारज, तातैं पाँनि प्रलंब

१ अहर्निशि—रात्रिदिन। २ कायोत्सर्ग मुद्रा। ३ संसाररूपी कीचड़में। ४ हाथ।

करे हैं । रह्यौ न कछु पाँयनतैं पैवौ[1], ताहीतैं पद नाहिं टरे हैं ॥ निरख चुके नैनन सब यातैं, नैन नासिका-अनी[2] धरे हैं । कानन[3] कहा सुनै यौं काननं[4], जोगलीन जिनराज खरे है ॥ ३ ॥

छप्पय ।

जयौ नाभिभूपालबाल, सुकुमाल सुलच्छन ।
जयौ स्वर्गपातालपाल, गुनमाल प्रतच्छन ॥
दृग विशाल वर भाल, लाल नख चरन विरज्जैंहिं[5] ।
रूप रसाल मराल चाल, सुन्दर लखि लज्जहिं ॥
रिपुजालकाल[6] रिसहेश[7] हम, फँसे जन्म-जंबाल[8]-दह ।
यातै निकाल बेहाल अति, भो दयाल दुख टाल यह ॥

चन्द्रप्रभस्तुति ।

सवैया (मात्रा ३२) ।

चितवत वदन अमल[9] चंद्रोपम, तजि चिंता चित होय अकामी[10] । त्रिभुवनचंद पापतपचंदन[11], नमत चरन चंद्रादिक नामी ॥ तिहुँ जग छई चंद्रिका-कीरति,

---

१ चलना । २ नोकपर । ३ कानोंसे । ४ जंगलमें । ५ विराजते हैं, शोभा देते है । ६ कर्मरूपी शत्रूसमूहके लिये यमराजके समान । ७ हे ऋषभेश, हे आदिनाथ । ८ कीचड़का द्रह । ९ निर्मल चन्द्रमाके समान । १० इच्छारहित । ११ पापरूपी आतापके लिये चन्दनके समान ।

चिह्न[1] चंद्र चिंतत शिवगामी। वन्दौं चतुरचकोर-चंद्रमा[2], चंद्रवरन[3] चंद्रप्रभस्वामी ॥ ५ ॥

शान्तिनाथस्तुति।

मत्तगयन्द (सवैया)।

शांति जिनेश जयौ जगतेश, हरै अघताप निशेश[3]-की नाईं। सेवत पाय सुरासुरराय, नमैं सिर नाय महीतलताईं ॥ मौलि[4] लगे मनिनील दिपैं, प्रभुके चरनौं झलकै वह झाँईं[5]। सूँघन पायँ-सरोज-सुगंधि[6], किधौं चलि ये अलिपंकति आईं ॥ ६ ॥

श्रीनेमिजिनस्तुति।

कवित्त मनहर (३१ वर्ण)।

शोभित प्रियंगँ[7] अग देखैं दुख होय भग, लाजत अनंग जैसैं दीप भानुभासतैं। बालब्रह्मचारी उग्रसेनकी कुमारी जादौ,-नाथ[8] तैं निकारी जन्मकादौ-दुखरासतैं॥ भीम भवकाननमैं आन न सहाय स्वामी, अहो नेमि नामी तकि आयौ तुम तासतैं। जैसैं कृपाकंद वन-

---

१ चन्द्रमाका है चिन्ह जिसके। २ बुद्धिमान पुरुषरूपी चकोरोंको चन्द्रमाके समान। ३ चन्द्रमाके समान। ४ मुकुटमें। ५ छाया। ६ चरणकमलोंकी सुगंधि। ७ प्रियंगुके (कगनीके) फूलके समान श्याम-वर्ण है शरीर जिनका। ८ हे यादवनाथ ! आपने राजीमतीको दुखमयी जन्ममरणरूप कीचड़से निकाल दिया।

जीवनकी बंद छोरी, त्यौं ही दासको खलास[1] कीजे भवपासतैं ॥ ७ ॥

श्रीपार्श्वनाथस्तुति ।

छप्पय (सिंहावलोकन) ।

जेनम-जलधि-जलजान[2], जान जनै[3]हंस-मानसर ।
सरव इंद्र मिलि आन[4], आन[5] जिस धरहिं सीसपर ॥
परउपकारी बान[6], बान[7] उत्थपइ[8] कुनय[9] गन । गन[10]-
सरोजवन-भान, भान[11] मम मोह-तिमिर-घन ॥ घनव-
रन देह दुख-दाह-हर, हरखत हेरि मयूर-मन । मनमथ-
मतंग-हरि पासाजिन[12], जिन[13] विसरहु छिन जगतजन॥८॥

श्रीवर्द्धमानजिनस्तुति ।

दोहा ।

दिढ़[14]-कर्माचल-दलन पवि, भवि[15]-सरोज-रविराय ।
कंचनछवि कर जोर कवि, नमत वीरजिन[16]-पाय ॥ ९

---

१ मुक्त—रहित । २ संसार समुद्र तरनेको जलयान अर्थात् जहाजके समान । ३ भव्यरूपी हंसोंको मानससरोवर । ४ आकरके । ५ आज्ञा । ६ स्वभाव । ७ वाणी । ८ उखाड़ती है । ९ खोटे नयोंको—नयाभासोंको । १० गण (मुनिमंडल) रूपीकमलवनको प्रफुल्लित करनेके लिये सूर्य । ११ नाश करनेवाले । १२ पार्श्वजिन । १३ मत भूलो । १४ कर्मरूपी मजबूत पर्वतको नष्ट करनेके लिये वज्रके समान । १५ भव्यरूपी कमलोंको प्रफुल्लित करनेके लिये सूर्य । १६ वीर भगवानके चरण ।

सवैया (३१ मात्रा)।

रहौ दूर अंतरकी महिमा, वाहिज[1] गुनवरनन बल कांपै। एक हजार आठ लच्छन तन,—तेज[2] कोटि-रवि-किरनि उथापै॥ सुरपति सहस[3] आँख अंजुलिसौं, रूपामृत पीवत नहिं धापै[4]। तुम विन कौन समर्थ वीरजिन, जगसौं काढि मोखमैं थापै॥ १०॥

श्रीसिद्धस्तुति।

मत्तगयंद।

ध्यानहुताशनमैं[5] अरि ईंधन, झोंक दियौ रिपु[6]-रोक निवारी। शोक हर्यौ भविलोकनकौ वर, केवलज्ञान-मयूख[7] उघारी॥ लोक अलोक विलोक भये शिव, जन्मजरामृतपंक[8] पखारी। सिद्धन थोक वसैं शिव-लोक, तिन्हैं पगधोक[9] त्रिकाल हमारी॥ ११॥

तीरथनाथ प्रनाम करैं, तिनके गुनवर्ननमैं बुधि हारी। मोम गयौ गलि मूँसमझार[10], रह्यौ तहँ व्योम[11] तदाकृतिधारी। लोक-गँहीर-नदीपति-नीर[12], गये तिर तीर

---

१ वाहिरी गुण वर्णन करनेकी शक्ति भी किसमें है? २ शरीरका तेज। ३ हज़ार नेत्ररूपी अंजुलियोंसे। ४ तृप्त होता है। ५ ध्यान-रूपी अग्निमें। ६ कर्म शत्रुओंकी रुकावटको निवारण किया। ७ किरण। ८ कीचड़। ९ पावाढोक—प्रणाम। १० साचेमें। ११ आकाश। १२ संसाररूप गंभीर समुद्रके पानीको तिरके।

भये अविकारी । सिद्धनथोक वसैं शिवलोक, तिन्हैं पग-धोक त्रिकाल हमारी ॥ १२ ॥

साधुस्तुति ।

कवित्त मनहर ।

शीतरितु-जोरैं अंग सब ही सकोरैं तहां, तनको न मोरैं नदीधोरै धीर जे खरे । जेठकी झकोरैं जहां अंडा चील छोरैं पशु, पंछी छांह लौरैं गिरिकोरैं तप वे धरे ॥ घोर घन घोरैं घटा चहूंओर डोरैं ज्यौं ज्यौं, चलत [10]हिलोरैं त्यौं त्यौं [11]फोरैं बल ये [12]अरे । देहनेह तोरैं परमारथसौं प्रीति जोरैं, ऐसे गुरुओरैं हम हाथ-अंजुली करे ॥ १३ ॥

जिनवाणीस्तुति ।

मत्तगयद (सवैया) ।

वीरहिमाचलतैं निकसी, गुरु गौतमके मुखकुंड ढरी है । [13]मोहमहाचल भेद चली, जगकी [14]जड़तातप दूर करी है ॥ ज्ञानपयोनिधिमाहिं रली, बहु भंग-त-

---

१ जोरसे । २ सुकड़ाते है । ३ नहीं मोड़ते । ५ नदीके किनारे । ५ लुएं–झकरे । ५ चीलपक्षी गर्मीके मारे अंडा छोड़ देते हैं । ६ चाहते है । ७ पर्वतके शिखरोंपर । ८ गरजते है । ९ डोलैं–डोलते हैं । १० झंझा पवनके झोके । ११ स्फुरायमान करके । १२ अड़े–डॅटे । १३ मोह-रूपी महापर्वत-हिमालयको । १४ जड़ता या मूर्खतारूपी गर्मी ।

रंगनिसौं उछरी है। ता शुचि शारदा गंगनदीप्रति, मैं अँजुरी निज सीस धरी है ॥ १४ ॥

या जगमंदिरमैं अनिवार[1], अज्ञान अँधेर छयौ अति भारी। श्रीजिनकी धुनि दीपशिखा सम, जो नहिं होती प्रकाशनहारी ॥ तो किहँभाँति पदारथपाँति[2], कहां लहते रहते अविचारी। याविधि संत कहैं धन है, धन है जिनवैन बडे उपगारी ॥ १५ ॥

इति मगलाचरण ।

जिनवाणी और मिथ्यावाणी।

कवित्त मनहर।

कैसेकरि केतकी कनेर एक कहि जाय, आँकदूध[3] गायदूध अंतर घनेर है। पीरी होत रीरी[4] पै न रीसँ[5] करै कचनकी, कहां काग-वानी कहां कोयलकी टेर है ॥ कहां भान भारौ कहां आँगिया[6] विचारौ कहां, पूनौको उजारौ कहां माँवसअँधेर[7] है। पच्छ छोरि पारखी निहारौ नेक नीके करि[8], जैनवैन औरवैन[9] इतनौं ही फेर है ॥ १६ ॥

---

१ जिसका निवारण न हो सके । २ पदार्थोंकी—तत्त्वोंकी पंक्ति । ३ "आक दूध सुरहीको" ऐसा भी पाठ है । ४ पीतल । ५ हिर्स—बराबरी । ६ खद्योत, पटबीजना । ७ अमावास्याका अँधेरा । ८ "निहार देखो नीकेकरि" ऐसा भी पाठ है । ९ दूसरे धर्मवालोंके वचनोंमें ।

वैराग्यकामना ।

कब गृहवाससौं उदास होय वन सेऊं, वेऊं निजरूप गति रोकूं मन करीकी । रहि हौं अडोल एक आसन अचल अंग, सहि हौं परीसा शीत-घाम-मेघ-झरीकी ॥ सारंगसमाज खाज कबधौं खुजै है आनि, ध्यान-दल-जोर जीतूं सेना मोहअरीकी । एकलविहारी जथाजातलिंगधारी कब, होऊं इच्छाचारी बलिहारी हौं वा घरीकी ॥ १७ ॥

राग और वैराग्यका अन्तर ।

रागउदै भोगभाव लागत सुहावनेसे, विनाराग ऐसे लागैं जैसैं नाग कारे है । रागहीसौं पाग रहे तनमैं सदीव जीव, राग गये आवत गिलानि होत न्यारे हैं॥ रागसौं जगतरीति झूठी सब सांची जानै, राग मिटैं सूझत असार खेल सारे हैं । रागी विनरागीके विचारमैं बड़ौ ई भेद, जैसैं "भँटा पच काहू काहूको बयारे है" ॥ १८ ॥

भोगनिषेध ।

मत्तगयंद (सवैया) ।

तू नित चाहत भोग नए नर, पूरवपुन्य विना

१ जानूं-अनुभवूं । २ मनरूपी हाथीकी । ३ मृगोंके समूह । ४ खुजली कंडू । ५ नग्नमुद्रा धारण करनेवाला । ६ 'वीतरागी' ऐसा भी एक पाठ है । ७ भटा अर्थात् बैंगन किसीको पथ्य होते हैं और किसीको वादी (वायुको बढ़ानेवाले) होते हैं ।

किम पैहै । कर्मसँजोग मिलै कहिं जोग, गहै तब रोग न भोग सकै है ॥ जो दिन चारकौ ब्योंत बन्यौ कहुं, तौ परि दुर्गतिमैं पछितैहै । यौंहित यार सलाह यही कि, " गई कर जाहु " निवाह न ह्वै है ॥ १९ ॥

देहस्वरूप ।

मातपिता-रज-वीरजसौं, उपजी सब सात कुधात भरी है । माखिनके[1] पर माफिक बाहर, चामके बेठन वेढ धरी है ॥ नाहिं तौ आय लगैं अब ही, बक[2] वायस[3] जीव बचै न घरी है । देहदशा यह दीखत भ्रात, घिनात नहीं किन बुद्धि हरी है ॥ २० ॥

संसारस्वरूप और समयकी बहुमूल्यता ।

कवित्त मनहर ।

काहूघर पुत्र जायौ काहूके वियोग आयौ, काहू रागरंग काहू रोआ रोई करी है । जहां भान ऊगत उछाह गीत गान देखे, सांझसमै ताही थान हाय हाय परी है ॥ ऐसी जगरीतको न देखि भयभीत होय, हा हा नर मूढ़ तेरी मति कौनैं हरी है । मानुषजनम पाय सोवत विहाय जाय, खोवत करोरनकी एक एक घरी है ॥ २१ ॥

---

१ मक्खियोंके परों जैसे पतले चमडेके बेठनसे [वेष्टनसे] घिरी हुई ।
२ बगुला । ३ कौआ ।

सोरठा ।

कर कर जिनगुनपाठ, जात अकारथ रे जिया ।
आठ पहरमैं साठ, घरीं घनेरे मोलकीं ॥ २२ ॥
कानी[1] कौड़ी काज, कोरिनको लिख देत खत ।
ऐसे मूरखराज, जगवासी जिय देखिये ॥ २३ ॥

दोहा ।

कानी कौड़ी विषय सुख, भवदुख करज अपार ।
विना दियैं नहिं छूटि है, लेशक[2] दाम उधार ॥ २४ ॥

शिक्षा ।

छप्पय ।

दश[3] दिन विषयविनोद, फेर वहु विपतिपरंपर ।
अशुचिगेह यह देह, नेह जानत न आप जर[4] ॥
मित्र वंधु—सनमंध और, परिजन जे[5] अंगी ।
अरे अंध सव धंध, जान स्वारथके संगी ॥
परहितअकाज अपनौ न कर, मूढराज अव समझ उर ।
तजि लोकलाज निज काज कर, आज दाव[6] है कहत गुर ।

कवित्त मनहर ।

जौलौं देह तेरी काहू रोगसौं न घेरी जौलौं, जरा
नाहिं नेरी जासौं पराधीन परि है । जौलौं, जमनामा
वैरी देय ना दमामा[7] जौलौं, मानै कान रामा[8] वुद्धि

१फूटी कौड़ीके लिये जैसे कोई करोड़ों रुपयेका तमस्सुक (चिट्ठी) लिख देवे । २ लेशमात्र भी । ३ 'दिन द्वय' ऐसा भी पाठ है । ४ जड़-अचेतन । ५ पुत्र वा नातेदार । ६ मौका । ७ नगाडा । ८ आज्ञा । ९ स्त्री ।

जाइ ना विगरि है ॥ तौलौं मित्र मेरे निज कारज सँवार ले रे, पौरुष थकैंगे फेर पीछै कहा करि है। अहो आग आयै जव झोंपरी जरन लागी, कुआके खुदायैं तव कौन काज सरि है ॥ २६ ॥

*सौ वरष आयु ताका लेखा करि देखा सव, आधी तौ अकारथ ही सोवत विहाय रे। आधीमै अनेक रोग वालवृद्धदशाभोग, और हु सँजोग केते ऐसे वीत जाँय रे ॥ वाकी अव कहा रही ताहि तू विचार सही, कारजकी वात यही नीकै मन लाय रे। खातिरमें आवै तौ खलासी कर इतनेमैं, भावै फाँसि फंदवीच दीनौं समुझाय रे ॥ २७ ॥

बुढापा।

वालपनैं वाल रह्यौ पीछै गृहभार वह्यौ, लोकलाजकाज वांध्यौ पापनकौ ढेर है। अपनौ अकाज कीनौ लोकनमैं जस लीनौं, परभौ विसार दीनौं विषै-

---

*आयुर्वर्षशत नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गत
तस्यार्धस्य परस्य चार्धमपर वालत्ववृद्धत्वयो ।
शेप व्याधिवियोगदु.खसहित सेवादिभिर्नीयते
जीवे वारितरङ्गवुद्वुदसमे सौख्य कुत प्राणिनाम ॥
[भर्तृहरे]

१ "खातिरमैं आवै तौ खलासी कर हाल, नहीं काल घाल परै है अचानक ही आय रे।" ऐसा भी एक पुस्तकमें पाठ है।

वश जेर (?) है ॥ ऐसे ही गई विहाय अलपसी रही आंय[1], नर-परजाय यह "आँधेकी बटेर" है । आये सेत[2] भैया अब काळ है अवैया अहो, जानी रे सयानैं तेरे अँजौं[3] हू अँधेर है ॥ २८ ॥

मत्तगयंद (सवैया) ।

वालपनै न सँभार सक्यौ कछु, जानत नाहिं हिता-हितहीको । यौवन वैसँ[4] वसी वनिता उर, कै नित राग रह्यौ लछमीको ॥ यौं पैन[5] दोइ विगोइ दये नर, डारत क्यौं नँरकै[6] निजजीको । आये हैं सेँत[7] अजौं शठ चेत, "गई सुगई अव राख रहीको" ॥ २९ ॥

कवित्त मनहर ।

सार नर देह सव कारजकौं जोग येह, यह तौ विख्यात बात वेदनमैं वँचै है । तामैं तरुनाई धर्मसे-वनकौ समै भाई, सेये तव विषै जैसैं माखी मधु रचै है ॥ मोहमदभोये[8] धनरामाहित रोज रोये, यौंही दिन खोये खाय कोदौं[9] जिम मैच है । अरे सुन वौरे अव आये सीस धौरे[10] अजौं, सावधान हो रे नर नरकसौं वचै है ॥ ३० ॥

---

१ आयु—उम्र । २ सफ़ेद वाल । ३ अवतक भी । ४ वयस—उम्र । ५ दो अवस्थाएं । ६ नरकमें । ७ सफ़ेदवाल । ८ मोहरूपी मदमें मग्न हुए । ९ कोदों (कोद्रव) को खाकर जिस तरह मत्त हो जाते हैं । १० सफ़ेद वाल ।

मत्तगयन्द (सवैया) ।

वाय लगी कि बलाय[1] लगी, मदमत्त भयौ नर भूलत त्यौं ही । वृद्ध भयैं न भजै भगवान, विषै–विष खात अघात न क्यौं ही ॥ सीस भयौ वगुलासम सेत, रह्यौ उरअंतर श्याम अजौं ही । मानुषभौ मुकताफलहार, गवाँर तगाँहित[2] तोरत यौं ही ॥ २१ ॥

ससारीजीवका चिंतवन ।

चाहत हैं धन होय किसी विध, तौ सब काज सरैं जियरा जी । गेह चिनाय[3] करूं गहना कछु, व्याहि सुता सुत बाँटिये भाँजी[4] ॥ चिन्तत यौं दिन जाहिं चले, जम आनि अचानक देत दगा जी । खेलत खेल खिलारि गये, " रहि जाइ रुपी[5] शतरजकी वाजी " ॥

तेज तुरंग[6] सुरंग भले रथ, मत्त मतंग[7] उतग खरे ही । दास खवास[8] अवास अटा, धन जोर करोरन कोश[9] भरे ही ॥ ऐसे बढे तौ कहा भयौ हे नर, छोरि चले उठि अत छेरे[10] ही । धाम खरे रहे काम परे रहे, दाम ढरे[11] रहे ठाम धरे ही ॥ २२ ॥

---

१ प्रेतवाधा । २ सूतके धागेके लिये । ३ चिनाकर–वनाकर । ४ विवाह वगैरह उत्सवोंमें जो मिष्टान्न वाटा जाता है, उसे भाजी कहते हैं । ५ जमी हुई । ६ घोडा । ७ हाथी । ८ खुशामद करनेवाले । ९ खजाना । १० अकेले ही । ११ 'गड़े रहे' तथा–'गरे रहे' ऐसा भी पाठ है ।

अभिमाननिषेध।

कवित्त मनहर।

कंचनभंडार भरे मोतिनके पुंज परे, घने लोग द्वार खरे मारग निहारते। जान चढ़ि डोलत हैं झीने सुर वोलत हैं, काहुकी हू ओर नेक नीके ना चितारते॥ कौलौं धन खांगे कोऊ कहै यौं न, लांगे तेई, फिरैं पाँय नांगे कांगे परपग झारते। एते पै अँयाने गरवाने रहैं विभौ पाय, धिक है समझ ऐसी धर्म ना सँभारते॥३४॥

देखो भरजोवनमै पुत्रको वियोग आयौ, तैसैं ही निहारी निज नारी कालमगमैं। जे जे पुन्यवान जीव दीसैत हे यानहीपै, रंक भये फिरैं तेऊ पनहीं न पगमैं॥ एते पै अभाँग धनजीतवसौं धरै राग, होय न विराग जानै रहूंगौ अलग मैं। आंखिन विलोकि अंध सूँसेकी अँधेरी करे, ऐसे राजरोगको इलाज कहा जगमै॥ ३५॥

---

१ यान-सवारी २ "कवतक धन खायेंगे, वहुत धन है" कोई ऐसा मत कहो, क्योंकि वे ही फिर लागे होकर अर्थात् भूखे होकर नंगे पैर फिरेंगे और कंगले वनकर पराये पैर झाड़कर उदरनिर्वाह करेंगे। ३ अजान मूर्ख। ४ सम्पत्ति धन। ५ दीखते थे। ६ अभागा। ७ शशक (खर्गोश) अपनी आँखें वंद करके जानता है कि अव सव जगह अँधेरा हो गया, मुझे कोई देखता ही नहीं है।

दोहा।

जैनवचन अंजनवटी, आंजैं सुगुरु प्रवीन।
रागतिमिर तऊ ना मिटै, बडो रोग लख लीन॥३६

मनहर।

जोई दिन कटै सोई आवमैं अवश्य घटै, बूंद बूंद वीतै जैसैं अंजुलीकौ जल है। देह नित झीन होत नैन तेजहीन होत, जोवन मलीन होत छीन होत बल है॥ आवै जरा नेरी तकै अंतक-अहेरी आवै, परभौ नजीक जात नरभौ निफल है। मिलकै मिलापी जन पूँछत कुशल मेरी, ऐसी दशामाहीं मित्र! काहेकी कुशल है? ॥ ३७ ॥

बुढापा।

मत्तगयद (सवैया)।

दृष्टि घटी पलटी तनकी छवि, बंकै भई गति लंकै नई है। रूस रही परनी घरनी अति, रंक भयौ परियंक लई है॥ कॉपत नार वहै मुख लार, महामति संगति छांरि गई है। अंग उपंग पुराने परे, तिशना उर और नवीन भई है॥ ३८ ॥

---

१ आयुमें—उम्रमें। २ नजदीक--निकट। ३ जमराजरूपी शिकारी। ४ वाकी--अटपट, कहीं पैर रखते हैं कहीं पड़ता है। ५ कमर। ६ नई अर्थात् झुक गई, टेढी हो गई। ७ विवाही हुई। ८ पलग—चारपाई। ९ गर्दन। १० बुद्धि छोडके चली गई—सठया गई। ११ गात्राणि शिथिलायन्ते तृष्णैका तरुणायते।

कवित मनहर।

रूपको न खोज रह्यौ तरु ज्यौं तुषार दह्यौ, भयौ पतझार किधौं रही डार सूनीसी। कूबरी भई है कटि दूबरी भई है देह, ऊंबरी इतेक आयु सेरमाहिं पूनीसी॥ जोबननैं विदा लीनी जरानैं जुहार कीनी, हानी भई सुधि बुधि सबै बात ऊनीसी। तेज घट्यौ ताव घट्यौ जीतबको चाव घट्यौ, और सब घट्यौ एक तिस्ना दिन दूनीसी॥ ३९॥

अहो इन आपने अभाग उदै नाहिं जानी, वीतराग-वानी सार दयारस-भीनी है। जोवनके जोर थिर जंगम अनेक जीव, जानि जे सताये कछु करुना न कीनी है। तेई अब जीवरास आये परलोकपास, लैंगे बैर दैंगे दुख भई ना नवीनी है। उनहीके भयकौ भरोसौ जान कांपत है, याही डर "डोकरानैं लाठी हाथ लीनी है"॥ ४०॥

जाकौं इंद्र चाहैं अहमिंद्रसे उमाहैं जासौं, जीव मुक्तमाहैं जाय भौ-मल वहावै है। ऐसौ नरजन्म पाय विषै-विष खाय खोयौ, जैसैं काच सांटैं मूढ मानक गमावै है॥ मायानदी बूडँ भींजा

१ बाकी। २ सेरभर रूईमें एक पौनीके बराबर बाकी रही। ३ उन्नीसी—कमती। ४ स्थावर जीव, एकेन्द्रिय। ५ बूढ़ेने। ६ बदलेमें। ७ डूबकरके।

कायावल तेज छीजा, आया पर्न तीजा अब कहा बनि आवै है। तातैं निज सीस ढोलै नीचे नैन किये डोलै, कहा वढ़ि वोलै वृद्ध वदन दुरावै है॥ ४१॥

मत्तगयन्द (सवैया)।

देखहु जोर जरा भटकौ, जमराज महीपतिकौ अगवानी। उज्जल केस निसान धरै, बहु रोगनकी सँग फौज पलानी॥ कायपुरी तजि भाजि चल्यौ जिहि, आवत जोवन-भूप गुमानी। लूट लई नगरी सँगरी, दिन दोयमैं खोय है नाम निसानी॥ ४२॥

दोहा।

सुमतिहिं तजि जोवन समय, सेवहु विषय विकार।
खलैंसाटैं नहिं खोइये, जनम-जवाहिर सार॥ ४३॥

कर्तव्याशिक्षा।

मनहर।

देवगुरु साँचे मान साँचौ धर्म हिये आन, साँचौ ही वखान सुनि साँचे पंथ आव रे। जीवनकी दया पाल झूठ तजि चोरी टाल, देख ना विरानी-वाल तिसना घटाव रे॥ अपनी वड़ाई परनिंदा मत करै भाई, यही चतुराई मद मांसकौं वचाव रे। साथ खटकर्म साध-

१ तीसरापन बुढ़ापा। २ सिर हिलाता है। ३ मुंह छुपाता है। ४ सारी। ५ खलीके वदले। ६ व्याख्यान—शास्त्र। ७ दूसरेकी स्त्री। साधुओंकी सज्जनोंकी।

संगतिमैं वैठ वीर, जो है धर्मसाधनकौ तेरे चित चाव[1] रे ॥ ४४ ॥

सांचौ देव सोई जामैं दोषकौ न लेश कोई, वहै गुरु जाकैं उर काहुकी न चाह है। सही धर्म वही जहां करुना प्रधान कही, ग्रंथ जहां आदि अंत एकसौ निवाह है ॥ ये ही जग रत्न चार इनकौं परख यार, सांचे लेहु झूठे डार नरभौकौ लाह[2] है। मानुष विवेक विना पशुकी समान गिना, तातैं याहि वात ठीक पारनी सलाह है ॥ ४५ ॥

साचे देवका लक्षण।

छप्पय।

जो[3] जगवस्त समस्त, हस्ततल जेम निहारै।
जगजनको संसार, सिंधुके पार उतारै ॥
आदि-अंत-अविरोधि, वचन सवको सुखदानी।
गुन अनंत जिहँमाहिं, रोगकी नाहिं निशानी ॥
माधव महेश ब्रह्मा किधौं, वर्धमान कै बुद्ध यह।

---

१ इच्छा—उत्कठा। २ लाभ।

३ यो विश्वं वेद वेद्यं जनन-जलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा
पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलङ्कं यदीयम्।
तं वन्दे साधुवंद्यं निखिलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तं
बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥

[अकलङ्काष्टक]

ये चिह्न जान जाके चरन, नमो नमो मुझ देव वह ॥

यज्ञमे हिंसानिषेध ।

कवित्त मनहर ।

*कहै पशु दीन सुन जग्यके करैया मोहि, होमत हुताशनमैं कौनसी बड़ाई है । स्वर्गसुख मैं न चहौं "देहु मुझे" यौं न कहौं, घास खाय रहौं मेरे यही मनभाई है ॥ जो तू यह जानत है वेद यौं वखानत है, जग्य जलौ जीव पावै स्वर्गसुखदाई है । डारै क्यौं न वीर यामैं अपने कुटुंवहीकौं, मोहि जिन जारै "जगदीसकी दुहाई है" ॥ ४७ ॥

सातो वारगर्भित षट्कर्मोपदेश ।

छप्पय[1] ।

[2]अघ-अँधर-आदित्य, नित्य स्वाध्याय करिज्जै ।
[3]सोमोपम संसार-तापहर, तप करलिज्जै ॥

---

*नाहं स्वर्गफलोपभोगतृषितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया ।
सन्तुष्टस्तृणभक्षणेन सतत हन्तुं न युक्तं तव ॥
स्वर्गं यान्ति यदि त्वया विनिहता यज्ञे ध्रुवं प्राणिनो ।
यज्ञं किं न करोपि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा वान्धवैः ॥
[यशस्तिलके]

१ इस छप्पयमें सातों दिनके नाम आये है । २ पापरूपी अंधेरेको मिटानेके लिये स्वाध्याय आदित्य अर्थात् सूर्यके समान है । ३ संसाररूपी तापको हरनेके लिये तप सोम अर्थात् चन्द्रमाके समान है ।

जिनवरपूजा नियम करहु, नित मंगलदायनि[1]।
बुध संजम आदरहु, धरहु चित श्रीगुरुपाँयनि ॥
निजवितसमान अभिमान बिन, सुकर[2] सुपत्तहिं[3] दान कर
यौं सौंनि[4] सुधर्म षटकर्म भनि, नरभौ-लाहौ लेहु नर ॥

दोहा।

ये ही छह विधि कर्म भज, सात विसन तज वीर।
इस ही पैंड़े[5] पहुचिं है, क्रम क्रम भवजलतीर ॥ ४९ ॥

सप्तव्यसन।

जूआखेलन मांस मद, वेश्याविसन शिकार।
चोरी पर-रमनी-रमन, सातौं पाप निवार ॥ ५० ॥

जूआनिषेध।

छप्पय।

सकल-पापसंकेत, आपदाहेत कुलच्छन[6]।
कलहखेत दारिद्र देत, दीसत निज अच्छन[7] ॥
गुनसमेत जस सेत, केत[8] रवि रोकत जैसैं।
औगुन-निकर-निकेत[9], लेत लखि बुधजन ऐसैं ॥
जूआ समान इह लोकमैं, आन अनीति न पेखिये।
इस विसनरायके खेलकौ, कौतुक हू नहिं देखिये ॥ ५१

१ भगवानकी पूजा मंगल करनेवाली है। २ शुक्रवार वा अच्छे हाथसे। ३ सुपात्रको। ४ शनिवार वा सुधर्म सनि अर्थात् सुधर्ममें मग्न होकर। ५ मार्गसे। ६ 'अलच्छन' भी पाठ है। ७ नेत्रोंसे। ८ जैसे सूर्यको केतु ग्रहका विमान रोक देता है। ९ अवगुण समूहका घर।

मासनिषेध ।

जंगम जियकौ नास, होय तब मांस कहावै ।
सपरस आकृति नाम, गन्ध उर घिन उपजावै ॥
नरकजोग निरदई, खाहिं नर नीच अधरमी ।
नाम लेत तज देत, असन उत्तमकुलकरमी ।
यह निपटनिंद्य अपवित्र अति, कृमिकुल-रास-निवास नित । आमिष अभच्छ याके सदा, वरजौ दोष दया-लचित ॥ ५२ ॥

मदिरानिषेध ।

दुर्मिल (सवैया) ।

कृमिरास कुवास सराय दहैं, शुचिता सब छीवत जात सही । जिहिं पान कियैं सुधि जात हियै, जननी जन जानत नार यही । मदिरा सम आन निषिद्ध कहा, यह जान भले कुलमैं न गही । धिक है उनकौं वह जीभ जलौ, जिन मूढ़नके मत लीन कही ॥ ५३ ॥

वेश्यानिषेध ।

धनकारन पापनि प्रीति करै, नहिं तोरत नेह जथा तिनकौ । लव चाखत नीचनके मुंहकी, शुचिता सब

---

१ एकेन्द्रीको छोड़कर बाकी सब जीवोंको जगम जीव कहते है । २ भोजन । ३ सड़ाकरके । ४ यदि धन नहीं होता है, तो स्नेहको तिनकेके समान तोड़ देती है । ५ लार--लाला ।

जाय छियैं जिनकौं । मद मांस बजारनि खाय सदा, अँधले विसनी न करै घिनकौं । गनिका सँग जे सठ लीन भये, धिक है धिक है धिक है तिनकौं* ॥ ५४ ॥

आखेटनिषेध ।

कवित्त मनहर ।

कानन[1]मैं बसै ऐसौ आन न गरीब जीव, प्राननसौ प्यारौ प्रान पूंजी जिस यहै है । कायर सुभाव धरै काहूँसौं न द्रोह करै, सबहीसौं डरै दांत लियैं तृन रहै है ॥ काहूसौं न रोप पुनि काहूपै न पोष चहै, काहूके परोख[2] परदोष नाहिं कहै है । नेकु स्वाद सारिवेकौं ऐसे मृग मारिवेकौं, हाहा रे कठोर तेरौ कैसैं कर[3] वहै है ‡ ॥ ५५ ॥

---

*या खादन्ति पलं पिवन्ति च सुरां जल्पन्ति मिथ्यावचः
स्निह्यन्ति द्रविणार्थमेव विदधत्यर्थप्रतिष्ठाक्षतिम् ।
नीचानामपि दूरवक्रमनसः पापात्मिका कुर्वते
लालापानमहर्निशं न नरकं वेश्यां विहायाऽपरम् ॥२४ ॥

[पद्मनन्दिपंचविंशतिका]

‡या दुर्देहैकवित्ता वनमधिवसति त्रातृसम्बन्धहीना
भीतिर्यस्यां स्वभावाद्दशनधृततृणा नापराधं करोति ।
वध्यालं सापि यस्मिन्ननु मृगवनिता मांसपिण्डप्रलोभादा-
दाखेटेऽस्मिन् रतानामिह किमु न किमन्यत्र नो यद्विरुद्धम् ॥

[पद्म० पंच०]

१ जंगलमें । २ परोक्षमें । ३ हाथ चलता है, उठता है ।

चोरीनिषेध ।

छप्पय ।

चिंता तजै न चोर, रहत चौंकायत[1] सारै ।
पीटै धनी विलोक, लोक निर्दइ मिलि मारै ।
प्रजापाल करि कोप, तोपसौं रोप उडावै ।
मरै महा दुख पेखि, अंत नीची गति पावै ॥
अति विपतिमूल चोरीविसन, प्रगट त्रास आवै नजर ।
परवित[2] अदत्त[3] अंगार गिन, नीतिनिपुन परसैं न कर॥

परस्त्रीसेवननिषेध ।

कुगतिवहन गुनगहन, दहन दावानलसी है। सुजस-चंद्रघनघटा[4], देहकृशकरन खई[5] है ॥ धन-सर-सोखन धूप, धरम-दिन-सांझसमानी[6] । विपतिभुजंगनिवास, बांबई[7] वेद वखानी ॥ इहिविधि अनेक औगुनभरी, प्रानहरन-फाँसी प्रवल । मत करहु मित्र यह जान जिय, परवनितासौं प्रीति पल ॥ ५७ ॥

परस्त्रीत्यागप्रसंसा ।

दुर्मिल सवैया ।

दिवि[8] दीपक-लोय[9] बनी वनिता, जड़जीव पतंग जहां परते । दुख पावत प्रान गवाँवत हैं, वरजे न

१ चौकन्ने । २ दूसरेका धन । ३ विना दिया हुआ । ४ सुयशरूपी चन्द्रमाको ढकनेके लिये बादलोंकी घटा । 'घटा'के स्थानमें 'छाहिं' भी पाठ है । ५ क्षयरोग । ६ धर्मरूपी दिनका अन्त करनेवाली सन्ध्या । ७ सापके रहनेकी बल्मीकि या बावी ।८दिव्य—प्रकाशमान ।९दीपककी शिखा ।

रहैं हठसौं जरते ॥ इहि भाँति विचच्छन अच्छनके[1] वश, होय अनीति नहीं करते । परती[2] लखि जे धरती निरखैं, धनि हैं धनि हैं धनि हैं नर ते ॥ ५८ ॥

दिढ़शील शिरोमनिकारजमैं, जगमैं जस आरज[3] तेइ लहैं । तिनके जुग लोचन वारजैं हैं, इहिभांति अचारज आप कहैं ॥ परकामिनिकौ मुखचंद चितै, मुँद जाहिं सदा यह टेव गहैं । धनि जीवन[5] है तिन जीवँ[6]-नकौ, धनि मायँ उनैं उरमाँय वहैं ॥ ५९ ॥

कुशीलनिन्दा ।

मत्तगयंद (सवैया)।

जे परनारि निहारि निलज्ज, हँसैं विगसैं वुधिहीन वड़ेरे । जूंठनकी जिमि पातँर पेखि, खुशी उर कूकर होत घनेरे ॥ है जिनकी यह टेव[11] वेहै[12], तिनकौं इस भौ अपकीरति है रे । [13]है परलोकविषैं दँढ़[14]दंड, करै शतखंड सुखाचलकेरे ॥ ६० ॥

एक एक व्यसनका सेवन करनेवाले ।

छप्पय ।

प्रथम पांडवा भूप, खेलि जूआ सव खोयौ ।
मांस खाय वर्क[15]-राय, पाय विपदा वहु रोयौ ॥

---

१ इन्द्रियोंके वश । २ पराई स्त्रीको । ३ आर्य, श्रेष्ठ पुरुष । ४ कमल । ५ जीवितव्य । ६ जीवोंका । ७ माता । ८ हृदयमें धारण करती हैं । ९ विकसित होवैं, खिल उठैं । १० पत्तल । ११ आदत । १२ वह आदत इस भवमें वदनामीरूप और परलोकमें वज्रके समान होकर सुखरूपी पर्वतके सैकडों टुकड़े कर देती है । १३ "है परलोकविषैं विजुरी सु–" ऐसा भी पाठ है । १४ वज्रदंड । १५ वक नामक राजा ।

विन जानैं मदपानजोग, जादौंगन दज्झे[1] ।
चारुदत्त दुख सह्यो, वेसवा-विसन[2] अरुज्झे ॥
नृप ब्रह्मदत्त आखेटसौं[3], द्विज शिवभूति अदत्तरति ।
पर-रमनि राचि रावन गयौ, सातौं सेवत कौन गति * ॥

दोहा ।

पाप नाम नरपति करैं, नरक नगरमैं राज ।
तिन पठये पायक[4] विसन, निजपुर वसती काज[5] ॥६२
जिनकैं जिनके[6] वचनकी, वसी हिये परतीत ।
विसनप्रीति ते नर तजौ, नरकवासभयभीत ॥६३॥

कुकविनिन्दा ।

मत्तगयन्द (सवैया) ।

राग उदै जग अंध भयौ, सहजैं सब लोगन लाज गवाँई । सीख विना नर सीख रहे, विसँनादिक सेवनकी[7] सुघराई ॥ तापर[8] और रचैं रसकाव्य, कहा कहिये

१ जले । २ वेश्याव्यसन । ३ शिकारसे ।

* द्यूताद्धर्मसुत पलादिह वको मद्याद्यदोर्नन्दना-
श्चारु कामुकया मृगान्तकतया स ब्रह्मदत्तो नृप ।
चौर्यत्वाच्छिवभूतिरन्यवनितादोषाद्दशास्यो हठा-
देकैकव्यसनाद्धता इति जना सर्वैर्न को नश्यति ॥ ३१॥
[पद्मनन्दिपञ्चविंशतिका]

४ सिपाही । ५ अपना नगर वसानेके लिये । ६ जिनदेवके । ७ "विषयानके सेवनकी" "विषयादिक सेवनकी" तथा "वनिता सुखसेवनकी" ये भी पाठ हैं । ८ "तापर रीझि रचैंरस काव्य, वडे निरदै कुमती कवि भाई" ऐसा भी पाठ है ।

तिनकी निठुराई। अंध असूझनकी अँखियानमै, झोंकत[1] हैं रज रामदुहाई॥ ६४॥

कंचन कुंभनकी उपमा, कह देत उरोजनको कवि बारे[2]। ऊपर श्याम विलोकत कै, मनिनीलमकी ढकनी ढँकि छारे॥ यों सतवैन कहैं न कुपंडित, ये जुग आमिषपिंड[3] उघारे। साधन झार दई मुँह छार, भये इहि हेत किधौं कुच कारे॥ ६५॥

ए विधि भूल भई तुमतैं, समुझे न कहां कसतूरि बनाई[4]। दीन कुरंगनके तनमैं, तृन दंत धरैं करुना किन आई॥ क्यों न करी तिन जीभनँ[5] जे, रसकाव्य करैं परकौं दुखदाई। साधु-अनुग्रह दुर्जन-दंड, दोऊ सधते विसरी चतुराई॥ ६६॥

मनरूप हाथी।

छप्पय।

ज्ञान महावत डारि, सुमति संकल गहि खंडै।
गुरु अंकुश नहिं गिनै, ब्रह्मव्रत[6]-विरख विहंडै॥
करि सिधंत सर न्हौन, केलि अघ-रजसौं ठानै।
कँरनचपलता[7] धरै, कुमति कँरनी[8] रति मानै॥

१ "मेलत हैं" ऐसा भी पाठ है। २ बालक—मूर्ख। ३ मासके लौंदे। ४ हरिणोंके शरीरमें कस्तूरी बनाई सो बडी भूल की। ५ रसकी कविता करनेवाले कवियोंकी जीभोंमें कस्तूरी बनाते, तो अच्छा होता। अभिप्राय यह कि उसके लिये उनकी जीभ नहीं काटी जाती। ६ब्रह्मचर्यरूपी वृक्ष। ७ कानोंकी चपलता, अथवा इन्द्रियोंके विषयोंकी चपलता। ८ हथिनी।

डोलत सुछन्द मदमत्त अति, गुण-पथिक न आवत उरै[1]।
वैराग्य खंभतैं बाँध नर, मन-मतग विचरत बुरै ॥६७॥

गुरुउपकार।

कवित्त मनहर।

ढईसी सराय काय पंथी जीव वस्यौ आय, रत्नत्रय निधि जापै मोख जाकौ घर है। मिथ्या निशि कारी जहां मोहअंधकार भारी, कामादिक तस्कर[2] समूहनकौ थर[3] है॥ सोवै जो अचेत सोई खोवै निज संपदाकौं, तहां गुरु पाहरू[4] पुकारैं दया कर है। गाफिल न हूजे भ्रात ऐसी है अँधेरी रात, "जाग रे बटोही[5] यहां चोरनको डर है" ॥ ६८ ॥

कषाय जीतनेका उपाय।

मत्तगयन्द सवैया।

छेमनिवास छिमा-धुँवनी[6] विन, क्रोध पिशाच उरै न टरैगौ। कोमलभाव उपाव विना, यह मान महामद कौन हरैगौ॥ आर्जव-सार[7]-कुठार विना, छलवेल निकंदन कौन करैगौ। तोर्षशिरोमनि मंत्र[8] पढे विन, लोभ फणीविष[9] क्यौं उतरैगौ॥ ६९ ॥

---

१ गुणरूपी मुसाफिर पास भी नहीं आते हैं। २ चोर। ३ स्थल—थल। ४ पहरेदार। ५ मुसाफिर। ६ क्षमारूपी धूनी। ७ आर्जव (सरलता) रूपी फौलादकी कुल्हाडी। ८ सतोषरूपी उत्कृष्ट मंत्र ९ सर्पका जहर।

मिष्टवचन।

काहेको बोलत बोल बुरे नर, नाहक क्यौं जस धर्म गमावै। कोमल वैन चंवै किनै[2] ऐनै[3], लगै कछु है न सवै मन भावै॥ तालु छिदै रसना न भिदै, न घटै कछु अंक दरिद्र न आवै। जीभैं कहैं जिय हानि नहीं, तुझ जी सब जीवनकौ सुख पावै॥ ७०॥

धैर्यधारणोपदेश।

कवित्त मनहर।

आयौ है अचानक भयानक असाता कर्म, ताके दूर करिवेको वली कौन अह रे। जे जे मन भाये ते कमाये पूर्व पाप आप, तेई अब आये निज उदैकाल लह रे॥ एरे मेरे वीर काहे होत है अधीर यामैं, कोऊको न सीरँ तू अकेलौ आप सह रे। भयैं दिलगीर[6] कछू पीर न विनासि जाय, ताहीतैं सयाने तू तमासगीर रह रे॥७१

होनहार दुर्निवार।

कैसे कैसे वली भूप भूपर विख्यात भये, वैरीकुल कांपै नेकु भौंहौंके विकारसौं। लंघे गिरि सायर[7] दिवा-यरसे दिपैं जिनौं, कायर किये हैं भट कोटिन हुंकारसौं॥ ऐसे महामानी मौत आये हू न हार मानी, क्यौं ही

---

१ वोलै। २ क्यों नहीं। ३ अच्छे। ४ हे जिय! जीभसे कहनेसे तेरी कुछ हानि नहीं, और सब जीवोंका जी सुख पाता है। ५ साझा। ६ चिंतित–दुखी। ७ सागर–समुद्र। ८ दिवाकर–सूर्य।

उतरे न कभी मानके पहारसौं। देवसौं न हारे पुनि दानेसौं न हारे और, काहूसौं न हारे एक हारे होन-हारसौं ॥ ७२ ॥

कालसामर्थ्य।

लोहमई कोट केई कोटनकी ओट करौ, काँगुरेन तोप रोपि राखौ पट भेरिकैं। इन्द्र चन्द्र चौंकायत चौकस ह्वै चौकी देहु, चतुरग चमूं चहूंओर रहौ घेरिकैं ॥ तहाँ एक भौंहिरा बनाय वीच बैठौ पुनि, वोलौ मति कोऊ जो बुलावे नाम टेरिकैं। ऐसैं पर-पंच-पाँति रचौ क्यौं न भाँति भाँति, कैसैं हू न छोरै जम देख्यौ हम हेरिकैं ॥ ७३ ॥

मत्तगयन्द सवैया।

अन्तकसौं न छुटै निहचै पर, मूरख जीव निरन्तर धूजै। चाहत है चितमैं नित ही सुख, होय न लाभ मनोरथ पूजै ॥ तौ पन मूढ़ बंध्यौ भय आस, वृथा वहु दुःखदवानल भूजै। छोड़ विचच्छन ये जड लच्छन धीरज धारि सुखी किन हूजै ॥ ७४ ॥

धैर्यशिक्षा।

जो धनलाभ लिलार लिख्यौ, लघु दीरघ सुक्र-

१ दानव—दैत्य। २ किवाड़ लगाके। ३ चौकन्ने। ४ सेना। ५ जमराजसे। ६ कांपै डरै।

तके अनुसारै । सो लहि है कछु फेर नहीं, मरुदेशके ढेरे सुमेरे सिधारै ॥ घाट न बाढ़ कहीं वह होय, कहा कर आवत सोच विचारै । कूप किधौं भर सागरमैं नर, गागर मान मिलै जल सारै ॥ ७५ ॥

आशारूपी नदी ।

मनहर कवित्त ।

मोहसे महान ऊंचे पर्वतसौं ढर आई, तिहूं जग भूतलमैं याहि विसतरी है । विविध मनोरथमैं भूरि जल भरी वहै, तिसना तरंगनिसौं आकुलता धरी है ॥ परैं भ्रम भौंर जहां रागसौ मगर तहां, चिंता तट तुंग धर्मवृच्छ ढाय ढरी है । ऐसी यह आशा नाम नदी है अगाध ताकौं, धन्य साधु धीरजजहाज चढ़ि तरी है ॥ ७६ ॥

महामूढ वर्णन ।

जीवन कितेक तामैं कहा वीत बाकी रह्यौ, तापै

---

१ मारवाड़के ढरमें अर्थात् टीबोंमें । २ सुमेरुपर जो कि सोने का है । ३ कम और ज्यादा । ४ चाहे कुआमेसे भर ले चाहे सागरमेंसे भर ले, तेरे घड़े भर ही जल मिलेगा । ५ सर्वत्र । ६ उक्त च;—

आशा नाम नदी मनोरथजला तृष्णातरंगाकुला
रागग्राहवती वितर्कविहगा धैर्यद्रुमध्वंसिनी ।
मोहावर्त्तसुदुस्तरातिगहना प्रोत्तुंगचिन्तातटी
तस्याः पारगता विशुद्धमनसो नन्दन्ति योगीश्वरा॥

[भर्तृहरे]

७ मनोरथमय । ८ ढाके–गिरा करके । ९ "धीरजतरंड" भी पाठ है ।

अध कौन कौन करै हेर फेर ही। आपको चतुर जानै औरनको मूढ़ मानै, सांझ होन आई है विचारत सवेर ही॥ चामहीके चखनतैं चितवै सकल चाल, उरसौं न चौंधै कर राख्यौ है अधेर ही। बाहै बान तानकै अचानक ही ऐसौ जम, दीस है मसान थान हाड़नकौ ढेर ही॥ ७७॥

केती वार स्वान सिंघ सांबर सियाल सांप, सिन्धुर साँरंग सूसा सूरी उदरै परचौ। केती वार चील चमगीदर चकोर चिरां, चक्रवाक चातक चंडूल तन भी धरचौ॥ केती वार कच्छ मच्छ मेडक गिंडोला मीन, शंख सीप कौड़ी है जलूकी जलमैं तिरचौ। कोऊ कहै "जाय रे जनावर!" तो बुरो मानै, यौं न मूढ़ जानै मैं अनेकवार है मरचो॥ ७८॥

दुष्टकथन।

छप्पय।

करि गुणअम्रतपान, दोषविष विषम समप्पै।
वंकचाल नहिं तजै, जुगल जिह्वा मुख थप्पै॥

१ देखै। २ चलावै। ३ वाण-शर। ४ खींचकरके। ५ वारहासिंगा। ६ हाथी, "सिंधुर सारंग" के स्थानमें "वानर विलाव" भी पाठ है। ७ मृग। ८ खरगोश। ९ सुअरी-सूकरी। १० चिड़िया। ११ जोंक। १२ उगलता है। १३ सापके दो जीभे होती है, दुष्ट द्विजिह्व अर्थात् चुगल होता है।

तकै निरन्तर छिद्र, उदै परदीप[1] न रुच्चै[2] ।
बिन कारण दुख करै, वैर-विष कबहुँ न मुच्चै[3] ॥
वर मौनमंत्रसौं होय वश, संगत कीयैं हान है ।
बहु मिलत बान यातैं सही, दुर्जन सांप समान है॥७९॥

विधातासे तर्क ।

मनहर कवित्त ।

सज्जन जो रचे तौ सुधारससौं कौन काज, दुष्ट जीव किये कालकूटसौ कहा रही । दाता निरमापे फिर थापे क्यौं कलपवृच्छ, जाचक बिचारे लघु तृण-हूतैं हैं सही ॥ इष्टके संयोगतैं न सीरौ[4] घनसार कछू, जगतकौ ख्याल इंद्रजाल सम है वही । ऐसी दोय दोय बात दीखै विधि एकहीसी, काहेको बनाई मेरे धोखौ मन है यही ॥ ८० ॥

चौवीस तीर्थंकरोंके चिन्ह ।

छप्पय ।

गैऊपुत्र[5] गजराज, बाज वानर मनमोहै ।
कोक कमल साँथिया, सोम[6] सफरीपँति[7] सोहै ॥
सुरतरु[8] गैंडा महिष, कोल[9] पुनि सेही जानौं ।
वज्र हिरन अज मीन, कलश कच्छप उर आनौं ॥

---

१ दीपका उदय वा पराई बढ़ती । २ अच्छा लगै । ३ छोड़ता है ४ शीतल । ५ बैल । ६ चन्द्रमा । ७ मगर । ८ कल्पवृक्ष । ९ शूकर ।

शतपत्र[1] शंख अहिराज[2] हरि[3], रिषभदेव जिन आदि ले।
श्रीवर्द्धमानलौं जानिये, चिहनें[4] चारु चौवीस ये ॥१८॥

श्रीऋषभदेवके पूर्वभव।

कवित्त मनहर।

आदि जयवर्मा दूजे महाबलभूप तीजे, सुरग—ईशान ललितांग देव थयौ है। चौथे वज्रजंघ एह पांचवें जुगल देह, सम्यक ले दूजे देवलोक फिर गयौ है॥ सातवें सुबुद्धिराय आठवें अच्युतइंद्र, नववें नरेंद्र वज्र-नाभ नाम भयौ है। दशैं अहमिन्द्र जान ग्यारवें रिषभ-भान[5], नाभिवंश-भूधरके[6] सीस जन्म लयौ है॥ ८२॥

श्रीचन्द्रप्रभके पूर्वभव।

गीता।

श्रीवर्म भूपति पालि पुहमी[7], स्वर्ग पहले सुर भयौ।
पुनि अजितसेन छखंडनायक, इंद्र अच्युतमैं थयौ॥
वर परम नाभिनरेश निर्जर, वैजयंति विमानमैं।
चंद्राभ स्वामी सातवें भव, भये पुरुषपुरानमैं॥ ८३॥

१ रक्तकमल। २ सर्पराज। ३ सिंह। ४ चिन्ह—निशान। ५ ऋषभदेवरूपी सूर्यने नाभिराजाके वंशरूपी उदयाचल पर्वतके शिखरपर जन्म लिया। ६ 'भूधर' कविका भी नाम है। ७ पृथ्वी।

श्रीशान्तिनाथके पूर्वभव ।

कवित्त (३१ मात्रा)

सिरीसेन आरज पुनि स्वर्गी, अमिततेज खेचरपद पाय । सुर रविचूल स्वर्ग आनतमैं, अपराजित बलभद्र कहाय ॥ अच्युतेंद्र वज्रायुध चक्री, फिर अहमिंद्र मेघरथराय । सरवारथसिद्धेश शांतजिन, ये प्रभुकी द्वादश परजाय ॥ ८४ ॥

नेमिनाथके पूर्वभव ।

छप्पय ।

पहले भव वन भील, दुतिय अभिकेतु सेठघर ।
तीजे सुर सौधर्म, चौथे[1] चिन्तागति नभचर ॥
पंचम चौथे स्वर्ग, छठैं अपराजित राजा ।
अच्युतेंद्र सातयैं, अमरकुलतिलक विराजा ॥
सुप्रतिष्ठराय आठम नवैं, जन्म जयन्तविमान धर ।
फिर भये नेमि हरिवंशशशि, ये दशभव सुधि करहु नर॥

श्रीपार्श्वनाथके भवान्तर ।

कवित्त (३१ मात्रा) ।

त्रिप्रपूत मरुभूत विचच्छन, वज्रघोष गज गहन[2]-मँझार । सुर पुनि सहसरश्मि विद्याधर, अच्युतस्वर्ग अमरि[3]-भरतार ॥ मनुजइंद्र[4] मध्यम ग्रैवेयिक, राजपुत्र

१ चौथेभवमे । २ वनमें । ३ देवागनाओंका पति, इन्द्र । ४ राजा ।

आनदकुमार। आनतेंद्र दशवैं भव जिनवर, भये पास-प्रभुके अवनार ॥ ८६ ॥

राजा यशोधरके भवान्तर।

मत्तगयंद सवैया।

राय यशोधर चन्द्रमती, पहले भव मंडल[1] मोर कहाये। जाहक सर्प नदीमध मच्छ, अजा अज भैंस अजा फिर जाये॥ फेरि भये कुकड़ा कुकड़ी[2], इन सात भवांतरमैं दुख पाये। चूनमई चरणायुध[3] मारि, कथा सुन संत हियैं नरमाये ॥८७॥

सुबुद्धिसखीके प्रति वचन।

मनहर कवित्त।

कहै एक सखी स्यानी सुन री सुबुद्धि रानी, तेरौ पति दुखी देख लागै उर आर[4] है। महा अपराधी एक पुग्गल है छहौं माहिं, सोई दुख देत दीसै नाना परकार है॥ कहत सुबुद्धि आली कहा दोष पुग्गल-कौ, अपनी ही भूल लाल होत आप ख्वार है। "खोटौ दाम आपनो सराफै कहा लगै वीर," काहूकौ न दोष मेरौ भौंदू भरतार है॥ ८८॥

---

१ कुत्ता। २ मुर्गा। ३ मुर्गाको मारके–बलि चढाके। ४ शूल।

गुजराती भाषामे शिक्षा ।

करिखा ।

ज्ञानमय रूप [1]रूड़ो सदा सासतौ, [2]ओळखै क्यौं न सुखपिंड भोला । [3]वेगळी [4]देहथी नेह तूं [5]शूं करै, एहनी टेव जो मेह ओला ॥ [6]मेरने मान भवदुक्ख [7]पाम्याँ [8]पछी, चैन [9]लाध्यो [10]नथी एक तोला । [11]वळी दुख [12]वृच्छनो बीज [13]बावै [14]अने, [15]आपथी [16]आपनै आप बोला ॥८९॥

द्रव्यलिंगी मुनि ।

मत्तगयंद सवैया ।

शीत सहैं तन धूप दहैं, [17]तरुहेट रहैं करुना उर आनैं । झूठ कहैं न अदत्त गहैं, वनिता न चहैं [18]लव लोभ न जानैं ॥ मौन वहैं पढि भेद लहैं, नहिं नेम [19]जहैं व्रत रीति पिछानै । यौं निवहैं पर मोख नहीं, विन ज्ञान यहै जिन वीर बखानैं ॥ ९० ॥

अनुभवप्रशंसा ।

कवित्त मनहर ।

जीवन अलप आयु बुद्धि बल हीन तामैं, आगम

---

१ सुन्दर । २ पहिचाने । ३ पृथक्–जुदी । ४ देहसे । ५ क्या । ६ मेरुके प्रमाण । ७ पाये । ८ पीछे । ९ मिला । १० नहीं । ११ फिर । १२ वृक्षका । १३ वोता है । १४ और । १५ आपसे । १६ आपको । १७ वृक्षके नीचे । १८ जरा भी । १९ छोड़ते ।

अगाधसिंधु कैसैं ताहि डाँक है। द्वादशांग मूल एक अनुभौ अपूर्व कला, भैवदाघहारी घनसौरकी सलौंक है॥ यह एक सीख लीजै याहीको अभ्यास कीजै, याको रस पीजै ऐसो वीरजिन-वौंक है। इतनो ही सार येही आतमको हितकार, यहीं लौं मदार और आगैं ढूकढाक है॥ ९१॥

भगवत्प्रार्थना।

आँगम अभ्यास होहु सेवा सरवग्य तेरी, संगति सदीव मिलो साधरमी जनकी। सन्तनके गुनको बखान यह बान परौ, मैटौ टेव देव परऔगुनकथनकी॥ सबहीसौं ऐन सुखदैन मुख वैन भाखौं, भावना त्रिकाल राखौं आतमीक धनकी। जौलौं कर्म काट खोलौं मोक्षके कपाट तौलौं, ये ही बात हूजौ प्रभु पूजौ आस मनकी॥ ९२॥

---

१ पार पावेगा। २ संसाररूपी उष्णताको हरन करनेवाला। ३ चन्दनकी। ४ शलाका—सलाई। ५ वाक्य है—वचन है। ६ यथा—

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिर्संगति सर्वदार्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रियहितवचं भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः॥

[नित्यपूजा]

जिनधर्मप्रशंसा ।

दोहा ।

छये अनादि अज्ञानसौं, जगजीवनके नैन ।
सब मत मूठी धूलकी, अंजन है मत जैन ॥ ९३ ॥
मूल नदिके तिरनकौ, और जतन कछु है न ।
सब मत घाट कुघाट हैं, राजघाट है जैन ॥ ९४ ॥
तीनभवनमैं भर रहे, थावर जंगम जीव ।
सब मत भच्छक देखिये, रच्छक जैन सदीव ॥९५॥
इस अपार जगजलधिमैं, नहिं नहिं और इलाज ।
[1]पाहनवाहन [2]धर्म सब, जिनवरधर्म जिहाज ॥ ९६ ॥
मिथ्यामतके मद छके, सब मतवाले लोय ।
सब मत[3]वाले जानिये, जिनमत मत्त न होय ॥ ९७ ॥
मत[4]-गुमानगिरि पर चढ़े, बड़े भये मनमाहिं ।
लघु देखैं सब लोककौं, क्यौं हूं उतरत नाहिं ॥ ९८ ॥
चाँ[5]मचखनसौं सब मती, चितवत करत निबेर ।
ज्ञाननैनसौं जैन ही, जो[6]वत इतनो फेर ॥ ९९ ॥
ज्यौं बजाज ढिग[7] राखिकैं, पट परखै परवीन ।
त्यौं मतसौं मतकी परख, पावैं पुरुष अमीन ॥१००॥

---

१ पत्थरकी नावें। २ सब धर्मोंवाले। ३ मदोन्मत्त–पागल। ४ धर्मके अभिमानरूपी पहाड़ पर। ५ चमड़ेके नेत्रोंसे–बाहिरी नजरसे। ६ देखते है। ७ पास पास रखके कपड़ोंकी जांच करता है।

दोय पक्ष जिनमतविषैं, नय निश्चय व्यवहार।
तिन विन लहै न हंस[1] यह, शिवसरवरकी पार ॥
सीझे सीझैं सीझ हैं, तीन लोक तिहुँकाल
जिनमतकौ उपकार सब, जिनै[2] भ्रम करहु दयाल ॥
महिमा जिनवर वचनकी, नहीं वचनबल होय।
भुजबलसौं सागर अगम, तिरै न तीरहिं कोय १०३
अपने अपने पंथको, पोखै सकल जहान।
तैसैं यह मतपोखना, मति समझौ मतिवान ॥१०४॥
इस असार संसारमैं, और न सरन उपाय।
जन्म जन्म हूजौ हमैं, जिनवरधर्म सहाय ॥ १०५ ॥

कविका परिचय।

कवित्त मनहर।

आगरेमैं बालबुद्धि भूधर खंडेलवाल, बालकके ख्यालसौं कवित्त कर जानै है। ऐसें[3] ही करत भयौ जैसिंघसवाई सूबा, हाकिम गुलाबचंद आये तिहि थानै है ॥ हरीसिंघ साहके सुवंश धर्मरागी नर, तिनके कहेसौं जोरि कीनी एक ठानै है। फिरि फिरि प्रेरे मेरे आलसकौ अंत भयौ, उनकी सहाय यह मेरौ मन मानै है ॥ १०६ ॥

---

१ आत्मा। २ मत करो। ३ ऐसी कविता करते करते आगरेमें सवाई जयसिंहका सूवा हुआ।

दोहा ।

सतरहसै इक्यासिया, पोहँ पाख तमलीन ।
तिथि तेरस रविवारको, सतक समापत कीन॥१०७

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।

परिशिष्ट ।

१. तीसरे पद्यके समान आशयवाला संस्कृत श्लो०.—

नो किञ्चित्करकार्यमस्ति गमनप्राप्यं न किञ्चिद्दृशो
दृश्यं यस्य न कर्णयो किमपि हि श्रोतव्यमप्यस्ति न ।
तेनालम्बितपाणिरुज्झितगतिर्नासाग्रदृष्टी रह·
संप्राप्नोति निराकुलो विजयते ध्यानैकतानो जिनः ॥ २ ॥

२ छठे पद्यके समान आशयवालाः—

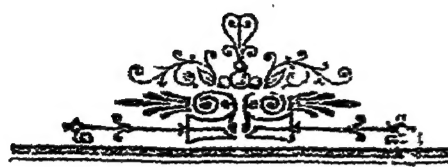
जयति जगदधीशः शान्तिनाथो जिनेन्द्रः
　　स्मृतमपि हि जनानां पापतापोपशान्त्यै ।
विबुधकुलकिरीटप्रस्फुरन्नीलरत्न—
　　द्युतिचलमधुपालीचुम्बितपादपद्मम् ॥

(दोनों पद्मनन्दिपंचविंशतिकासे)



---

१ पूषके अंधेरे पाखमें ।



सब जगहके छपे हुए संस्कृत, प्राकृत,

और हिन्दीके शुद्ध जैनग्रन्थोंके

मिलनेका ठिकाना:—

मैनेजर—श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालय,

हीराबाग पो० गिरगांव (बम्बई.)

